प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठ.: माननीय न्यायमूर्ति श्री मनींद्र मोहन श्रीवास्तव

रिट याचिका (दांडिक) क्रमांक 702/2009

याचिकाकर्ता डॉ. राजेंद्र नारायण परिधा

बनाम

उत्तरवादीगण छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

आदेश

आदेश हेतु दिनांक 05.07.2010 को सूचीबद्ध करें।

सही/-

मनींद्र मोहन श्रीवास्तव

न्यायाधीश

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

एकल पीठ.: माननीय न्यायमूर्ति मनींद्र मोहन श्रीवास्तव

रिट याचिका (दांडिक) क्रमांक 702/2009

याचिकाकर्ता : डॉ. राजेंद्र नारायण परिधा

बनाम

उत्तरवादीगण छत्तीसगढ़ राज्य और अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत रिट याचिकाएँ

.....

उपस्थिति:

याचिकाकर्तागण की ओर से श्री मनोज परांजपे।

राज्य/उत्तरवादी क्रमांक 1 से 6 की ओर से श्री सतीश गुप्ता, शासकीय अधिवक्ता।

उत्तरवादी क्रमांक 7 की ओर से श्री गौतम भादुड़ी, अधिवक्ता।

.....

आदेश

(05.07.2010 को पारित)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत प्रस्तुत इस याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी क्रमांक 7 राकेश बंसल द्वारा पुलिस थाना अंबिकापुर, जिला सरगुजा में दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट क्रमांक 156/2007 को अभिखण्डित करने का अनुरोध किया है। याचिकाकर्ता ने सत्र विचारण क्रमांक 478/2007 (छत्तीसगढ़ राज्य बनाम डॉ. आर.एन. परिधा) में विद्वान सत्र न्यायाधीश, अंबिकापुर

द्वारा पारित आदेश दिनांक 24-09-2008 (अनुलग्नक पी-1) को भी अभिखण्डित करने का अनुरोध किया है, जिसमें याचिकाकर्ता द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(8) सहपठित धारा 91 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन को खारिज कर दिया गया था। साथ ही, यह भी अनुरोध किया है कि उपरोक्त आवेदन को स्वीकार किया जाए और विद्वान सत्र न्यायाधीश को अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए किसी स्वतंत्र एजेंसी द्वारा आगे की विवेचना का निर्देश देने का निर्देश दिया जाए।

(2) इस याचिका को प्रस्तुत करने वाले और मामले के निर्णय के लिए आवश्यक सुसंगत तथ्य यह हैं कि श्रीमती सोनू बंसल पति उत्तरवादी क्रमांक 7 राकेश बंसल, गर्भावस्था के दौरान याचिकाकर्ता डॉ आर एन परिधा द्वारा विभिन्न तिथियों पर जांच की गई थी। कथित तौर पर, हालांकि गंभीर जटिलताएं हुईं, जिसके परिणामस्वरूप एक भ्रूण की मृत्यु हो गई और अन्य भ्रूण गंभीर रूप से संक्रमित हो गया, याचिकाकर्ता ने घोर उपेक्षा की, यह आरोप लगाया गया है कि बार-बार जब जटिलताएं बढ़ीं, तो श्रीमती सोनू बंसल पति उत्तरवादी क्रमांक 7 राकेश बंसल को याचिकाकर्ता डॉ आर एन परिधा के पास ले जाया गया, लेकिन याचिकाकर्ता ने ध्यान नहीं दिया और यह कहती रहे कि गर्भ के अंदर भ्रूण का विकास ठीक था। यह आगे आरोप लगाया गया है कि दिनांक 14-09-2006 को याचिकाकर्ता द्वारा गर्भावस्था की जांच की गई और इसे सामान्य बताया गया। आर. एन. परिधा ने फिर बताया कि सब कुछ सामान्य है। आगे आरोप यह है कि दिनांक 27-09-2006 को श्रीमती सोनू बंसल ने गर्भ में भ्रूण की नगण्य हलचल और त्वचा पर दाने होने की शिकायत की। इसके अलावा दिनांक 28-09-2006 को उन्हें याचिकाकर्ता के नर्सिंग होम ले जाया गया, लेकिन वहाँ उचित देखभाल नहीं हुई और लगभग चार घंटे की देरी के बाद, याचिकाकर्ता डॉ. आर. एन. परिधा ने उनकी सतही जाँच की और फिर सोनोग्राफी की, जिसके बाद बताया गया कि सब कुछ सामान्य है। अंत में, गर्भवती महिला को दूसरे चिकित्सालय ले जाया गया, जहाँ चिकित्सक ने जाँच के बाद बताया कि गर्भ में एक भ्रूण तीन दिन से मृत है और दूसरा गंभीर रूप से संक्रमित है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(3) पीड़ित महिला और उत्तरवादी क्रमांक 7, उसके पति द्वारा शिकायत की गई थी, जिसके बाद कलेक्टर द्वारा गठित एक टीम द्वारा जांच की गई थी जिसमें अनुविभागीय अधिकारी, सिविल सर्जन, स्त्री

रोग विशेषज्ञ और तहसीलदार शामिल थे। अनुविभागीय अधिकारी, अंबिकापुर ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि गर्भ में भ्रूण की दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु और दूसरे भ्रूण का गंभीर रूप से संक्रमित होना याचिकाकर्ता की ओर से घोर उपेक्षा के कारण हुआ था। श्रीमती सोनू बंसल के पति राकेश बंसल द्वारा दिनांक 29-03-2007 को प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी। जांच के बाद, अंबिकापुर के मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय में पुलिस थाना सरगुजा द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 304, 316, 338 और 201 के तहत अपराध का आरोप अधिरोपित करते हुए एक अभियोग-पत्र प्रस्तुत किया गया था। दिनांक 26-11-2007 को याचिकाकर्ता ने पुलिस से आगे की जांच पर रिपोर्ट मांगने के लिए दं.प्र. सं. की धारा 173(8) के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया। दिनांक 04-12-2007 को याचिकाकर्ता ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, अंबिकापुर के समक्ष दं.प्र. सं. की धारा 91 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें पुलिस को दो चिकित्सा विशेषज्ञों द्वारा प्रस्तुत चिकित्सा विवरण की प्रति प्रस्तुत करने का निर्देश जारी करने की प्रार्थना की गई। इसके बाद, विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, अंबिकापुर ने अपने आदेश दिनांक 22-12-2007 के तहत उक्त आवेदन को खारिज कर दिया। दांडिक मामला सत्र न्यायाधीश, अंबिकापुर के सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए उपार्जित किए जाने के बाद इसे सत्र विचारण क्रमांक 478/2007 के रूप में पंजीकृत किया गया। याचिकाकर्ता ने फिर से दं.प्र.सं. की धारा 91 सहपठित धारा 173(8) के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया। दिनांक 05-01-2008 को विचारण न्यायालय में चिकित्सा विवरण और आगे की जाँच पर रिपोर्ट माँगने के लिए एक आवेदन प्रस्तुत किया। आक्षेपित आदेश के तहत, विद्वान विचारण न्यायालय ने अपने दिनांक 24-09-2008 के आदेश के तहत इस याचिका को प्रस्तुत करने वाले आवेदन को खारिज कर दिया।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(4) इस याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने न केवल दं.प्र.सं. की धारा 91 सहपठित धारा 173(8) के तहत उसके आवेदन को खारिज करने वाले विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा दिनांक 24-09-2008 को पारित आदेश की वैधता और विधिमान्यता पर प्रश्न उठाया है, बल्कि प्रथम सूचना रिपोर्ट क्रमांक 156/2007 को अभिखण्डित करने का भी अनुरोध किया है।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 304, 316, 338 और 201 के तहत अपराध का आरोप अधिरोपित किया गया है, तथा सत्र विचारण क्रमांक 478/2007 में दांडिक कार्यवाही भी अभिखण्डित किए जाने योग्य है, क्योंकि याचिकाकर्ता के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनता है, भले ही अभियोजन पक्ष के पूरे मामले को उसके सत्य मान लिया गया हो। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि प्रथम सूचना रिपोर्ट और पूरी दांडिक कार्यवाही अभिखण्डित की जानी चाहिए क्योंकि ये **जैकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य और अन्य, 2005 एआईआर एससीडब्ल्यू 3685** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी दिशानिर्देशों का पूर्ण उल्लंघन करते हुए संस्थित की गई हैं और जारी रखी जा रही हैं।

(6) अपनी प्रस्तुतियों को विस्तार से बताते हुए, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता ने एक चिकित्सा व्यवसायी के रूप में अपने कर्तव्यों का पालन किया और दांडिक मामले का पूरा आधार अनुविभागीय अधिकारी द्वारा प्रस्तुत झूठी रिपोर्ट है, जो जांच समिति के दो विशेषज्ञ सदस्यों, डॉ. पी. के. श्रीवास्तव, सिविल सर्जन, अंबिकापुर और डॉ. सुषमा सिन्हा, स्त्री रोग विशेषज्ञ, की रिपोर्ट के विपरीत है, जिन्होंने कहा था कि याचिकाकर्ता ने श्रीमती सोनू बंसल का उपचार करते समय कोई उपेक्षा, घोर लापरवाही या असावधानीपूर्ण कार्य नहीं की है और यह केवल गलत निदान का मामला था। यह तर्क दिया गया है कि चूँकि अनविभागीय अधिकारी की अध्यक्षता वाली समिति के दो विशेषज्ञ सदस्यों ने स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता के पक्ष में अपनी राय दी थी, इसलिए जैकब मैथ्यू (पुर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आधार पर न तो कोई दांडिक मामला दर्ज किया जा सकता है और न ही याचिकाकर्ता पर अभियोजन चलाया जा सकता है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि जाँच समिति की रिपोर्ट झूठी है और इसे उसके विरुद्ध दांडिक मामला दर्ज करने का आधार नहीं बनाया जा सकता।

(7) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह भी तर्क है कि याचिकाकर्ता एक चिकित्सक है और उसने श्रीमती सोनू बंसल पति राकेश बंसल का अपनी समझ के अनुसार उपचार किया है और यह ऐसा मामला

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

नहीं था जिसके लिए दांडिक उपेक्षा का आरोप अधिरोपित करते हुए दांडिक मामला दर्ज किया जाए। उन्होंने आगे तर्क प्रस्तुत किया कि यदि न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य पर विचार किया जाए, तो भी कथित अपराध के तत्व सिद्ध नहीं होते। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, पुलिस ने निष्पक्ष जाँच नहीं की। याचिकाकर्ता ने थाना प्रभारी, पुलिस अधीक्षक और पुलिस महानिदेशक से अनुरोध किया कि वे जैकब मैथ्यू (पूर्वोक्त) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुसार उचित जाँच करें और कोई भी दांडिक कार्यवाही शुरू करने से पहले डॉ. पी. के. श्रीवास्तव, सिविल सर्जन और डॉ. सुषमा सिन्हा, स्त्री रोग विशेषज्ञ की चिकित्सकीय राय को ध्यान में रखें, लेकिन इस पर कोई ध्यान नहीं दिया गया, न ही उन रिपोर्टों को अभियोग-पत्र के साथ अभिलेख में लाया गया और उन रिपोर्टों की अनदेखी करते हुए, पुलिस ने अभियोग-पत्र प्रस्तुत कर दिया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(8) जहाँ तक याचिकाकर्ता के आवेदन को दिनांक 24-09-2008 के आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार करने का संबंध है, यह तर्क दिया गया है कि विद्वान सत्र न्यायाधीश/विचारण न्यायालय ने याचिकाकर्ता के आवेदन को गुण-दोष के आधार पर विचार किए बिना यंत्रवत् खारिज कर दिया है, केवल इस आधार पर कि याचिकाकर्ता द्वारा पूर्व में प्रतिबद्ध न्यायालय/मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया ऐसा ही आवेदन दिनांक 22-12-2007 को खारिज कर दिया गया था और याचिकाकर्ता ने विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा ही आवेदन प्रस्तुत करते समय इस तथ्य को छिपाया था और इसके अतिरिक्त, याचिकाकर्ता ने दिनांक 22-12-2007 के आदेश, जो अंतिम रूप से लागू हो गया था, के विरुद्ध कोई उपाय नहीं किया था। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि दिनांक 22-12-2007 का आदेश गुण-दोष के आधार पर नहीं था क्योंकि विद्वान दंडाधिकारी ने केवल यह टिप्पणी की थी कि चिकित्सा विवरण प्राप्त होने तक कार्यवाही को लंबित रखना उचित नहीं होगा और याचिकाकर्ता आरोप विरचित करते समय या विचारण के दौरान बचाव पक्ष के स्तर पर ऐसा आधार अपना सकता है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि दं.प्र. सं. की धारा 173(8) में निहित प्रावधानों के अनुसार, विवेचना अधिकारी के लिए अतिरिक्त दस्तावेज़ प्रस्तुत करना हमेशा संभव है और वह

निर्धारित प्रपत्र में ऐसे साक्ष्यों के संबंध में दंडाधिकारी को आगे की रिपोर्ट भेज सकता है और इसमें कोई प्रतिबंध नहीं है। दं.प्र. सं. की धारा 91 के साथ धारा 173(8) के तहत याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज करते हुए, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने विधि के उपरोक्त प्रावधान की अनदेखी की और आगे जाँच का निर्देश न देकर गंभीर अवैधता की। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने **पेप्सी फूड्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम विशेष न्यायिक दंडाधिकारी एवं अन्य, एआईआर 1998 एससी 128, केंद्रीय जांच ब्यूरो बनाम आर.एस. पै एवं अन्य, एआईआर 2002 एससी 1644, दिनेश डालमिया बनाम सीबीआई, 2007 एआईआर एससीडब्लू 6112 और निर्मल सिंह कहलों बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य, 2009 एआईआर एससीडब्लू 60** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है।

(9) इसके विपरीत, उत्तरवादियों/राज्य के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि वर्तमान याचिका अपने आप में स्वीकार्य नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता के पास विधि के तहत अन्य वैकल्पिक प्रभावी उपचार उपलब्ध हैं। उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे तर्क दिया कि प्रथम सूचना रिपोर्ट और आरोप-पत्र में रखे गये साक्ष्य स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ता के विरुद्ध अभियोजन का मामला बनाती है क्योंकि दं.प्र. सं. की धारा 161 के तहत दर्ज अभियोजन पक्ष के साक्षियों के कथन से, विशेष रूप से चिकित्सकों के कथन से, यह नहीं कहा जा सकता है कि दांडिक कार्यवाही शुरू करना किसी विधि के तहत आधारित था या विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग था। यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि चिकित्सकों के कथन के अनुसार, जिन्होंने बाद में शिकायतकर्ता राकेश बंसल की पत्नी श्रीमती सोनू बंसल का उपचार किया, इस स्तर पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध अभियोजन का मामला बनता है। अपने निवेदन में, याचिकाकर्ता पर कथित अपराध के लिए अभियोजन चलाते समय सर्वोच्च न्यायालय के दिशानिर्देशों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(10) उत्तरवादी क्रमांक 7 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अभियोजन पक्ष के मामले, अभियोजन पक्ष के साक्षियों के कथन और जाँच रिपोर्ट के मात्र अवलोकन से यह पता चलता है कि

याचिकाकर्ता, उत्तरवादी क्रमांक 7-राकेश बंसल की पत्नी श्रीमती सोनू बंसल के उपचार में घोर दांडिक उपेक्षा का दोषी है। यह तर्क दिया गया है कि जिस प्रकार से याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी क्रमांक 7-राकेश बंसल की पत्नी श्रीमती सोनू बंसल के साथ व्यवहार किया, उससे स्पष्ट है कि यह केवल गलत निदान का मामला नहीं था, बल्कि उपेक्षा और असावधानी का मामला था, क्योंकि गर्भवती महिला को याचिकाकर्ता के पास ले जाने के बावजूद, उसकी बीमारियों और भ्रूण के विकास की जाँच नहीं की गई और बल्कि यह झूठा निदान विवरण दिया गया कि सब कुछ ठीक है, जबकि ऐसी रिपोर्ट की तिथि पर, गर्भ में पल रहे ऐसे भ्रूणों में से एक की पहले ही मृत्यु हो चुकी थी और दूसरे को गंभीर संक्रमण हो गया था। जैसे ही गर्भवती महिला को अन्य चिकित्सकों के पास ले जाया गया, पता चला कि जुड़वाँ बच्चों में से एक की तीन दिन पूर्व ही मृत्यु हो चुकी थी और दूसरा गंभीर संक्रमण से पीड़ित था, जिसकी भी मृत्यु हो गई। उत्तरवादी क्रमांक 7 के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि यह घोर उपेक्षा का मामला था और अभियोग-पत्रमें अभिलेख पर ऐसा गंभीर साक्ष्य उपलब्ध है जो याचिकाकर्ता के अभियोजन को पूरी तरह से उचित ठहराती है। आगे यह तर्क दिया गया कि विचारण न्यायालय ने दं.प्र. सं. की धारा 173(8) सहपठित धारा 91 के तहत याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज करके कोई अवैधता नहीं की है, क्योंकि याचिकाकर्ता इस न्यायालय से यह निर्देश नहीं मांग सकता था कि पुलिस मामले की किसी विशेष तरीके से जाँच करे। यदि याचिकाकर्ता अपने मामले के समर्थन में दो चिकित्सकों की रिपोर्ट पर भरोसा करना चाहता है, तो यह याचिकाकर्ता पर निर्भर है कि वह अभियोजन के उचित चरण में अपने बचाव में इसे साबित करे, लेकिन उठाए गए आधारों पर, यह नहीं कहा जा सकता कि दिनांक 29-04-2008 के आक्षेपित आदेश द्वारा याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज करने में कोई अवैधता थी। अपने तर्क के समर्थन में, उत्तरवादी क्रमांक 7 के विद्वान अधिवक्ता ने **मार्टिन एफ. डिसूजा बनाम मोहम्मद इश्फाक, 2009 एआईआर एससीडब्ल्यू 1807, जैकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य और अन्य, 2005 एआईआर एससीडब्ल्यू 3685, एन. पी. झारिया बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2007 एआईआर एससीडब्ल्यू 4834** के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(11) उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने दो आधारों पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत इस याचिका की पोषणीयता के संबंध में प्रारंभिक आपत्ति उठाई है। जहां तक प्रथम सूचना रिपोर्ट, अभियोग-पत्र और दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने की प्रार्थना का संबंध है, उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि आरोप अभी तक विरचित नहीं किए गए हैं और याचिकाकर्ता को आरोप विरचित करने के चरण में विद्वान विचारण न्यायालय के समक्ष यह प्रस्तुत करने का अवसर मिलेगा कि आरोप विरचित करने लायक कोई मामला नहीं बनता है और इसलिए, अकेले इस आधार पर, यह याचिका विचारणीय नहीं है और दांडिक कार्यवाही को रोकने के प्रयास के कारण खारिज किए जाने योग्य है। प्रस्तुत करने का दूसरा भाग यह है कि जहां तक दं.प्र. सं. की धारा 173(8) के तहत याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज करने के दिनांक 24-09-2008 के आदेश का संबंध है। जहाँ तक संबंधित है, इस न्यायालय के समक्ष धारा 397 के अंतर्गत पुनरीक्षण का एक उपचार उपलब्ध है, जो पूर्णतः प्रभावकारी और प्रभावी है, और इसलिए, जहाँ तक दिनांक 24-09-2008 के आदेश को चुनौती देने का संबंध है, यह याचिका वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के आधार पर खारिज किए जाने योग्य है। उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने इस आपत्ति पर और बल देते हुए तर्क दिया कि याचिकाकर्ता द्वारा पुनरीक्षण के माध्यम से आदेश को चुनौती देने के वैकल्पिक उपचार का लाभ उठाए बिना हस्तक्षेप करने का कोई असाधारण आधार नहीं है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(12) जहां तक प्रथम सूचना रिपोर्ट और अभियोग-पत्रसहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने के लिए याचिका की पोषणीयता के संबंध में आपत्ति का संबंध है, **पेप्सी फूड्स लिमिटेड और एक अन्य** (पुर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों को संदर्भित करना सुसंगत है, जो कार्यवाही की पोषणीयता के संबंध में गंभीर आपत्ति से निपटते हैं। निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया:-

"22. यह सुस्थापित है कि उच्च न्यायालय दांडिक मामलों में न्यायिक पुनर्विलोकन की अपनी शक्ति का प्रयोग कर सकता है। **हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य, 1992**

अनुपूरक (1) सर्वोच्च न्यायालय मामले 335 में, इस न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत असाधारण शक्ति और संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अंतर्निहित शक्तियों की भी जाँच की, जिसके बारे में उसने कहा कि उच्च न्यायालय द्वारा किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए इनका प्रयोग किया जा सकता है। इन प्रावधानों के अंतर्गत न्यायालय द्वारा अधिकारिता का प्रयोग करने के संबंध में कुछ दिशानिर्देश निर्धारित करते हुए, यह भी कहा गया कि ये दिशानिर्देश अनम्य नहीं हो सकते या न्यायालयों द्वारा पालन किए जाने वाले कठोर सूत्र निर्धारित नहीं कर सकते। ऐसी शक्ति का प्रयोग प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा, लेकिन इसका एकमात्र उद्देश्य किसी भी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकना या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करना होगा। ऐसे दिशानिर्देशों में से एक वह है जहाँ प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में अधिरोपित आरोप, भले ही उन्हें उनके वास्तविक अर्थ पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया अभियुक्त के विरुद्ध मामला दर्ज करने के लिए कोई अपराध नहीं बनाते हैं। अनुच्छेद 227 के अंतर्गत उच्च न्यायालय द्वारा अधीक्षण की शक्ति न केवल प्रशासनिक प्रकृति की है, बल्कि न्यायिक प्रकृति की भी है। यह अनुच्छेद उच्च न्यायालय को विचारण न्यायालयों द्वारा विधि प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और न्याय प्रशासन की धारा को स्वच्छ एवं शुद्ध बनाए रखने के लिए व्यापक शक्तियाँ प्रदान करता है। संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 तथा संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों की कोई सीमा नहीं है, लेकिन जितनी अधिक शक्ति होगी, इन शक्तियों का प्रयोग करते समय उतनी ही अधिक सावधानी और सतर्कता बरतनी होगी। जब शक्तियों का प्रयोग संहिता के अनुच्छेद 227 या धारा 482 के अंतर्गत किया जा सकता है, तो अनुच्छेद 226 के उपबंधों का प्रयोग करना हमेशा आवश्यक नहीं हो सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"29. इसमें कोई संदेह नहीं है कि दंडाधिकारी अभियोजन के किसी भी चरण में अभियुक्त को आरोप से उन्मोचित कर सकता है, यदि वह समझता है कि आरोप निराधार है, लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि अभियुक्त अपने विरुद्ध कार्यवाही को अभिखण्डित करने के लिए संहिता की धारा 482 या संविधान के

अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटा सकता है, जब शिकायत उसके विरुद्ध कोई मामला नहीं बनाती है और फिर भी उसे दांडिक विचारण की पीड़ा से गुजरना होगा।"

(13) उपरोक्त के अनुसार, मैं इस याचिका की स्वीकार्यता के संबंध में उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता की आपत्ति को यथावत रखने के लिए इच्छुक नहीं हूं, जहां तक प्रथम सूचना रिपोर्ट, आरोप-पत्र और दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने की प्रार्थना का संबंध है, केवल इस आधार पर कि आरोप विरचित करने के चरण में याचिकाकर्ता को यह प्रस्तुत करने का अवसर मिलेगा कि न्यायालय के समक्ष उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर आरोप विरचित किए जाने योग्य नहीं हैं।

(14) हालांकि, उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाई गई दूसरी आपत्ति कि दिनांक 24-09-2008 के आदेश के विरुद्ध दं.प्र.सं. की धारा 397 के तहत पुनरीक्षण प्रस्तुत करने का वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है, में बल है। यह ध्यान देने की आवश्यकता है कि वर्तमान में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत प्रस्तुत एक याचिका है। याचिकाकर्ता ने न केवल दं.प्र. सं. की धारा 173(8) के तहत अपने आवेदन को खारिज करने वाले दिनांक 24-09-2008 के आदेश को अभिखण्डित करने की प्रार्थना की है, बल्कि प्रथम सूचना रिपोर्ट और पूरी दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने की भी प्रार्थना की है। जहां तक दं.प्र. सं. की धारा 173(8) के तहत याचिकाकर्ता के आवेदन को खारिज करने के कारण शिकायत सौंपने और किसी स्वतंत्र एजेंसी द्वारा आगे की जांच के निर्देश देने का संबंध है, याचिकाकर्ता भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इस न्यायालय के पर्यवेक्षी अधिकारिता का आह्वान करना चाहता है। हालांकि, यह सुस्थापित है कि वैकल्पिक उपचार का अस्तित्व भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत याचिका पर विचार करने के लिए एक बाधा के रूप में कार्य नहीं करता है, फिर भी विवेकाधीन और पर्यवेक्षी अधिकारिता का प्रयोग करते समय यह सुसंगत है। आमतौर पर, यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत अपने अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए इच्छुक नहीं है जहां एक प्रभावोत्पादक वैकल्पिक उपचार उपलब्ध है। लेकिन यह सामान्य नियम नहीं है। उपयुक्त मामलों में, वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के बावजूद, हस्तक्षेप की

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

आवश्यकता हो सकती है। अच्छी तरह से ज्ञात, हालांकि संपूर्ण नहीं, परिस्थितियां हैं जब यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत याचिका पर विचार करने से पहले वैकल्पिक उपचार का लाभ उठाने पर जोर नहीं देगा। अधिकारिता की कमी, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन, दुर्भावना या जहां विधि की वैधता को चुनौती दी जा रही है, आमतौर पर वैकल्पिक उपचार पर जोर नहीं दिया जाता है। हालाँकि, ये संपूर्ण परिस्थितियाँ नहीं हैं। उपयुक्त मामलों में, विवेक का प्रयोग किया जा सकता है और वैकल्पिक उपचार मौजूद होने के बावजूद याचिका पर विचार किया जा सकता है। हालाँकि, यह याचिकाकर्ता पर निर्भर है कि वह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अंतर्गत कार्यवाही का आश्रय लेने से पहले वैधानिक वैकल्पिक उपचार के समाप्त होने के सामान्य नियम से विचलन का मामला प्रदर्शित करे और उसे उचित ठहराए। जहां तक विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 24-09-2008 के आदेश को चुनौती देने का संबंध है, याचिकाकर्ता भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 के तहत असाधारण अधिकारिता का आह्वान करने के लिए किसी भी असाधारण परिस्थिति के साथ सामने नहीं आ पाया है। याचिकाकर्ता की शिकायत यह रही है कि याचिकाकर्ता ने अभियोग-पत्रजमा करने के बाद आगे की जांच करने के लिए जांच एजेंसी को निर्देश जारी करने की प्रार्थना की थी। याचिकाकर्ता की शिकायत यह रही है कि विचारण न्यायालय ने द.प्र. सं. की धारा 173(8) के तहत आवेदन को बिना गुण-दोष पर विचार किए केवल इस आधार पर खारिज कर दिया कि पहले इस तरह का आवेदन दंडाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिन्होंने उसे खारिज कर दिया था। इस न्यायालय की राय में, यह कोई विशेष मामला नहीं बनाता है जिससे वैकल्पिक उपचार के समाप्त होने के सामान्य नियम से हट जाए। याचिकाकर्ता दं.प्र. सं. की धारा 397 के तहत पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत करके इन शिकायतों को उठा सकता है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए कोई असाधारण कारण उपलब्ध नहीं है। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह मामला नहीं है कि पुनरीक्षण याचिका उपलब्ध नहीं है। तदनुसार, उत्तरवादियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाई गई दूसरी आपत्ति यथावत है। यह न्यायालय विद्वान न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 24-09-2008 के आदेश की सत्यता या अन्यथा के पहलू पर विचार करने के लिए इच्छुक नहीं है जिसमें याचिकाकर्ता की दं.प्र. सं. की धारा 173(8) के तहत याचिका खारिज कर दी गई है। हालांकि, याचिकाकर्ता के लिए दं.प्र. सं. की धारा 397 के तहत पुनरीक्षण याचिका

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

प्रस्तुत करने का उपचार अपनाना खुला होगा। और उन सभी आधारों पर विचार करें जो इस न्यायालय के समक्ष दिनांक 24-09-2008 के आदेश (अनुलग्नक पी-1) की वैधता और विधिमान्यता पर प्रश्न उठाने के लिए प्रस्तुत किए गए हैं।

(15) पुलिस थाना अंबिकापुर में दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट क्रमांक 156/2007 को अभिखण्डित करने की प्रार्थना दो आधारों पर आधारित है। पहला, याचिकाकर्ता, जो एक चिकित्सा व्यवसायी है, पर जैकब मैथ्यू (पूर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी अनिवार्य दिशानिर्देशों का पूर्ण उल्लंघन करते हुए अभियोजन चलाया गया है। दूसरा तर्क यह है कि पूरी कार्यवाही अन्यथा विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। अभिलेख पर कोई चिकित्सकीय साक्ष्य नहीं है और न ही चिकित्सा विशेषज्ञों की कोई रिपोर्ट है जो यह दर्शाए कि याचिकाकर्ता दांडिक उपेक्षा का दोषी था और यदि अभियोजन पक्ष के मामले को यथावत स्वीकार भी कर लिया जाए, तो भी प्रथम सूचना रिपोर्ट में निहित आरोपों के आधार पर याचिकाकर्ता पर दांडिक विचारण चलाने का कोई मामला नहीं बनता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(16) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के प्रथम निवेदन को समझने के लिए, जैकब मैथ्यू (पुर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निकाले गए निष्कर्ष को पुनः उद्धृत करना अत्यंत सुसंगत होगा, जो इस प्रकार है:-

> 49. हम अपने निष्कर्षों का सारांश इस प्रकार देते हैं:
>
> (1) उपेक्षा किसी कर्तव्य का उल्लंघन है जो किसी ऐसे कार्य को करने में चूक के कारण होता है जिसे एक विवेकशील व्यक्ति उन विचारों से निर्देशित होकर करता जो सामान्यतः मानवीय मामलों के आचरण को नियंत्रित करते हैं, या ऐसा कुछ करना जो एक प्रज्ञावान और विवेकशील व्यक्ति नहीं करेगा। यहाँ ऊपर उल्लिखित, रतनलाल एवं धीरजलाल (न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह द्वारा संपादित) के अपकृत्य विधि में दी गई उपेक्षा की परिभाषा मान्य है। उपेक्षा उस कार्य या चूक से उत्पन्न चोट के कारण कार्यवाही योग्य हो जाती है जो वादग्रस्त व्यक्ति के कारण उपेक्षा के बराबर होती है। उपेक्षा के तीन आवश्यक घटक हैं: "कर्तव्य", "उल्लंघन" और "परिणामी क्षति"।

(2) चिकित्सा व्यवसाय के संदर्भ में उपेक्षा के लिए अनिवार्य रूप से एक अलग उपचार की आवश्यकता होती है। किसी व्यवसायी, विशेष रूप से चिकित्सक की ओर से की गई उतावलेपन या उपेक्षा का अनुमान लगाने के लिए, अतिरिक्त विचार लागू होते हैं। व्यावसायिक उपेक्षा का मामला पेशेवर उपेक्षा के मामले से भिन्न होता है। केवल उपेक्षा, निर्णय की त्रुटि या कोई दुर्घटना, किसी चिकित्सा पेशेवर की ओर से उपेक्षा का प्रमाण नहीं है। जब तक कोई चिकित्सक उस समय के चिकित्सा पेशे के लिए स्वीकार्य किसी पद्धति का पालन करता है, तब तक उसे केवल इसलिए उपेक्षा के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि उपचार का कोई बेहतर वैकल्पिक तरीका या विधि उपलब्ध थी या केवल इसलिए कि कोई अधिक कुशल चिकित्सक उस पद्धति या प्रक्रिया का पालन या आश्रय नहीं लेता जिसका अभियुक्त ने पालन किया। जब सावधानी बरतने में विफलता की बात आती है, तो यह देखना होगा कि क्या वे सावधानियां बरती गईं जो लोगों के सामान्य अनुभव के अनुसार पर्याप्त थीं; विशेष या असाधारण सावधानियां न बरतना, जो उस विशेष घटना को रोक सकती थीं, कथित उपेक्षा के आकलन का मानक नहीं हो सकता। इसी प्रकार, अपनाई गई पद्धति का आकलन करते समय देखभाल के मानक का आकलन घटना के समय उपलब्ध ज्ञान के आधार पर किया जाता है, न कि अभियोजन की तिथि के आधार पर। इसी प्रकार, जब किसी विशेष उपकरण का उपयोग न करने के कारण उपेक्षा का आरोप अधिरोपित किया जाता है, तो आरोप तब भी विफल हो जाएगा जब वह उपकरण उस विशेष समय (अर्थात, घटना के समय) पर सामान्य रूप से उपलब्ध न हो, जिस पर यह सुझाव दिया गया है कि उसका उपयोग किया जाना चाहिए था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(3) किसी पेशेवर को दो निष्कर्षों में से किसी एक के आधार पर उपेक्षा के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है: या तो उसके पास वह अपेक्षित कौशल नहीं था जिसका उसने दावा किया था, या उसने दिए गए मामले में उचित योग्यता के साथ उस कौशल का प्रयोग नहीं किया जो उसके पास था। यह तय करने के लिए कि आरोपित व्यक्ति लापरवाह है या नहीं, लागू किया जाने वाला मानक उस पेशे में सामान्य कौशल का प्रयोग करने वाले एक सामान्य सक्षम व्यक्ति का होगा। प्रत्येक पेशेवर के लिए उस शाखा में

उच्चतम स्तर की विशेषज्ञता या कौशल रखना संभव नहीं है जिसमें वह कार्यरत है। एक उच्च कुशल पेशेवर में बेहतर गुण हो सकते हैं, लेकिन इसे उपेक्षा के अभियोग पर कार्यवाही किए गए पेशेवर के प्रदर्शन का आकलन करने का आधार या पैमाना नहीं बनाया जा सकता।

(4) **बोलम प्रकरण (1957) 1 डब्ल्यूएलआर 582,** 586 में निर्धारित चिकित्सकीय उपेक्षा के निर्धारण के लिए परीक्षण भारत में अपनी प्रयोज्यता में मान्य है।

(5) सिविल और दांडिक विधि में उपेक्षा की न्यायशास्त्रीय अवधारणा अलग-अलग है। सिविल विधि में जो उपेक्षा हो सकती है, वह दांडिक विधि में ज़रूरी नहीं कि उपेक्षा ही हो। उपेक्षा को अपराध मानने के लिए, आपराधिक मनःस्थिति (मेन्स रीआ) का अस्तित्व सिद्ध होना ज़रूरी है। किसी कृत्य को दांडिक उपेक्षा मानने के लिए, उपेक्षा की मात्रा बहुत ज़्यादा अर्थात गंभीर या अत्यधिक होनी चाहिए। ऐसी उपेक्षा जो न तो गंभीर हो और न ही उससे ज़्यादा गंभीर, दीवानी विधि में कार्यवाही का आधार बन सकती है, लेकिन अभियोजन का आधार नहीं बन सकती।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(6) भारतीय दंड संहिता की धारा 304-क में "गंभीर" शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, फिर भी यह तय है कि दांडिक विधि में उपेक्षा या उतावलापन, जिसे ऐसा माना जाता है, इतनी ज़्यादा होनी चाहिए कि वह "गंभीर" हो। भारतीय दंड संहिता की धारा 304-क में प्रयुक्त "उतावलेपन या उपेक्षा भरे कृत्य" को "गंभीर" शब्द से ही स्पष्ट किया जाना चाहिए।

(7) दांडिक विधि के तहत किसी चिकित्सा व्यवसायी पर उपेक्षा का विचारण चलाने के लिए यह साबित करना होगा कि अभियुक्त ने कुछ ऐसा किया या करने में विफल रहा जो दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में कोई भी चिकित्सा व्यवसायी अपनी सामान्य समझ और विवेक से नहीं करता या करने में विफल रहता। अभियुक्त चिकित्सक द्वारा उठाया गया जोखिम इस प्रकार का होना चाहिए कि इससे होने वाली चोट संभवतः आसन्न हो।

(8) *स्वयं प्रमाण* केवल साक्ष्य का एक नियम है और यह सिविल विधि के अधिकारिता में, विशेष रूप से अपकृत्यों के मामलों में, लागू होता है और उपेक्षा से संबंधित मामलों में सबूत का भार निर्धारित करने में मदद करता है। दांडिक विधि के अधिकारिता में उपेक्षा के लिए दायित्व निर्धारित करने हेतु इसे सेवा में नहीं लगाया जा सकता। *स्वयं प्रमाण* यदि है भी, तो दांडिक उपेक्षा के आरोप पर विचारण में सीमित अनुप्रयोग है।

(17) उपरोक्त निर्णय जैकब मैथ्यू (पूर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा चिकित्सकों के अभियोजन के मामले में निर्धारित दिशानिर्देश निम्नानुसार हैं:-

> "51. जैसा कि हमने ऊपर देखा है, चिकित्सकों (शल्यचिकित्सकों और चिकित्सकों) पर दांडिक अभियोजन चलाए जाने के मामले बढ़ रहे हैं। कभी-कभी ऐसे अभियोजन निजी शिकायतों द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं और कभी-कभी पुलिस द्वारा प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज होने और संज्ञान लेने पर। विवेचना अधिकारी और निजी शिकायतकर्ता को हमेशा चिकित्सा विज्ञान का ज्ञान नहीं होना चाहिए ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि अभियुक्त चिकित्सा व्यवसायी का कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 304-क के तहत दांडिक विधि की सीमा में उतावलापन या उपेक्षा का कार्य है या नहीं। एक बार शुरू हुई दांडिक प्रक्रिया चिकित्सा व्यवसायी को गंभीर शर्मिंदगी और कभी-कभी उत्पीड़न का शिकार बनाती है। गिरफ्तारी से बचने के लिए उसे जमानत लेनी पड़ती है, जो उसे मिल भी सकती है और नहीं भी। अंततः उसे दोषमुक्त या उन्मोचित करके क्षमा किया जा सकता है, लेकिन उसकी प्रतिष्ठा को जो हानि हुई है, उसकी भरपाई किसी भी मानक से नहीं की जा सकती।
>
> 52. हमारा यह मानना न समझा जाए कि चिकित्सकों पर कभी भी ऐसे अपराध के लिए अभियोजन नहीं चलाया जा सकता जिसमें उतावलापन या उपेक्षा एक अनिवार्य घटक है। हम बस समाज के हित के लिए सावधानी और सतर्कता की आवश्यकता पर ज़ोर दिया जा रहा है। क्योंकि चिकित्सा व्यवसाय मानव सेवा में सबसे श्रेष्ठ है, इसलिए चिकित्सकों को तुच्छ या

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

अन्यायपूर्ण अभियोजनों से बचाने की आवश्यकता है। कई शिकायतकर्ता चिकित्सा व्यवसायी पर अनावश्यक या अनुचित मुआवज़ा पाने के लिए दबाव डालने के साधन के रूप में दांडिक प्रक्रिया का आश्रय लेना पसंद करते हैं। ऐसी दुर्भावनापूर्ण कार्यवाहियों से सावधान रहना होगा।

53. भारत सरकार और/या राज्य सरकारों द्वारा भारतीय चिकित्सा परिषद के परामर्श से कुछ दिशानिर्देशों को शामिल करते हुए सांविधिक नियम या कार्यकारी निर्देश तैयार और जारी किए जाने चाहिए। जब तक ऐसा नहीं किया जाता, हम भविष्य के लिए कुछ दिशानिर्देश निर्धारित करने का प्रस्ताव करते हैं जो उन अपराधों के लिए चिकित्सकों के अभियोजन को नियंत्रित करेंगे जिनमें दांडिक उपेक्षा या दांडिक उतावलापन एक घटक है। एक निजी शिकायत पर तब तक विचार नहीं किया जा सकता जब तक कि शिकायतकर्ता ने अभियुक्त चिकित्सक की ओर से उतावलापन या उपेक्षा के आरोप का समर्थन करने के लिए किसी अन्य सक्षम चिकित्सक द्वारा दी गई विश्वसनीय राय के रूप में न्यायालय के समक्ष प्रथम दृष्टया साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया हो। विवेचना अधिकारी को, उतावलापन या उपेक्षा के अभियुक्त चिकित्सक के विरुद्ध कार्यवाही करने से पहले, एक स्वतंत्र और सक्षम चिकित्सा राय प्राप्त करनी चाहिए, अधिमानतः शासकीय सेवा में कार्यरत किसी ऐसे चिकित्सक से जो चिकित्सा पद्धति की उस शाखा में योग्य हो और जिससे सामान्यतः जाँच में एकत्रित तथ्यों के आधार पर *बोलम का परीक्षण* लागू करते हुए निरपेक्ष और निष्पक्ष राय देने की अपेक्षा की जा सकती है। किसी चिकित्सक पर उतावलापन या उपेक्षा का आरोप लगने पर उसे सामान्य रूप से गिरफ्तार नहीं किया जा सकता (सिर्फ़ इसलिए कि उस पर आरोप लगाया गया है)। जब तक जाँच को आगे बढ़ाने या साक्ष्य इकट्ठा करने के लिए उसकी गिरफ़्तारी ज़रूरी न हो, या जब तक विवेचना अधिकारी को यह विश्वास न हो जाए कि जिस चिकित्सक के ख़िलाफ़ कार्यवाही की जा रही है, वह गिरफ़्तारी के बिना अभियोजन का सामना करने के लिए उपलब्ध नहीं होगा, तब तक गिरफ़्तारी रोकी जा सकती है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(18) उपर्युक्त दिशानिर्देशों से यह स्पष्ट है कि किसी चिकित्सा व्यवसायी के अभियोजन के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने समाज के हित में सावधानी और सतर्कता बरतने की आवश्यकता पर बल

दिया है ताकि उसे तुच्छ और अन्यायपूर्ण अभियोजन से बचाया जा सके। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि विवेचना अधिकारी को, उतावलेपन या लापरवाही के अभियुक्त चिकित्सक के विरुद्ध कार्यवाही करने से पहले, एक स्वतंत्र और सक्षम चिकित्सिय राय प्राप्त करनी चाहिए, अधिमानतः चिकित्सा पद्धति की उस शाखा में योग्य शासकीय सेवा में कार्यरत किसी चिकित्सक से, जिससे सामान्यतः जाँच में एकत्रित तथ्यों के आधार पर बोलम का परीक्षण लागू करते हुए निरपेक्ष और निष्पक्ष राय देने की अपेक्षा की जा सकती है।

अपने निर्णय में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **बोलम बनाम फ्रीर्न हॉस्पिटल मैनेजमेंट कमेटी, [1957] डब्ल्यूएलआर 582, 586 में जस्टिस मैकनेयर** की राय का उल्लेख किया।

(19)व्यवसायी/चिकित्सकों पर अभियोजन चलाने का विवाद्यक **मार्टिन एफ. डिसूजा बनाम मोहम्मद इश्फाक, 2009 एआईआर एससीडब्ल्यू 1807** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष फिर से विचार के लिए आया, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने जैकब मैथ्यू (पुर्वोक्त) के मामले में अपने पूर्व निर्णय में प्रतिपादित सिद्धांतों को दोहराया और बोलम के नियम की पुनः पुष्टि की।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(20) **मलय कुमार गांगुली बनाम सुकुमार मुखर्जी एवं अन्य, 2010 एआईआर एससीडब्ल्यू 769** के मामले में हाल ही में दिए गए निर्णय में, जो दांडिक चिकित्सा उपेक्षा के पहलू से संबंधित था, निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया:

> "186. इस मामले में प्रश्न यह होगा कि क्या उत्तरवादी दांडिक उपेक्षा के दोषी हैं। दांडिक उपेक्षा, सामान्य जनता या विशेष रूप से किसी व्यक्ति को होने वाली क्षति से बचाने के लिए उचित और उपयुक्त सावधानी के साथ अपने कर्तव्य का पालन न करने और सावधानियां न बरतने की स्थिति है।

187. हालाँकि, यह सर्वविदित है कि जहाँ तक चिकित्सक द्वारा की गई कथित उपेक्षा का संबंध है, उपेक्षा मानने के लिए केवल उपेक्षा या निर्णय की त्रुटि पर्याप्त नहीं है। दांडिक उपेक्षा माने जाने के लिए उपेक्षा गंभीर या बहुत उच्च स्तर की होनी चाहिए।

188. चिकित्सा विज्ञान एक जटिल विज्ञान है। चिकित्सा उपेक्षा का अनुमान लगाने से पहले, न्यायालय को न केवल उपेक्षा के अस्तित्व को, बल्कि व्यवसायी के कामकाज की गहराई और कार्य की प्रकृति का भी अध्ययन करने के बाद उसकी ओर से हुई चूक या भूल को भी स्वीकार करना चाहिए। मृत्यु का कारण प्रत्यक्ष या निकट होना चाहिए। सिविल कार्यवाही और दांडिक कार्यवाही के बीच अंतर अवश्य ध्यान में रखा जाना चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उपेक्षा की न्यायशास्त्रीय अवधारणा सिविल और दांडिक विधि में भिन्न होती है। सिविल विधि में जो उपेक्षा हो सकती है, वह ज़रूरी नहीं कि दांडिक विधि में भी उपेक्षा ही हो। उपेक्षा को अपराध मानने के लिए, यह सिद्ध करना आवश्यक है कि आपराधिक मनःस्थिति का तत्व विद्यमान है। किसी कार्य को दांडिक उपेक्षा मानने के लिए, उपेक्षा की मात्रा बहुत अधिक होनी चाहिए। ऐसी उपेक्षा जो इतनी अधिक न हो, दीवानी विधि में कार्यवाही का आधार तो बन सकती है, लेकिन अभियोजन का आधार नहीं बन सकती। दांडिक विधि के तहत किसी चिकित्सा व्यवसायी पर उपेक्षा का अभियोजन चलाने के लिए, यह सिद्ध करना आवश्यक है कि अभियुक्त ने कुछ ऐसा किया या करने में विफल रहा जो दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में कोई भी चिकित्सा व्यवसायी अपनी सामान्य समझ और विवेक से नहीं करता या करने में विफल रहता।

(21) जैकब मैथ्यू (पूर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों का पालन करते हुए, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के समक्ष दृढ़तापूर्वक तर्क दिया कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध संबंधित विषय के चिकित्सा विशेषज्ञों की कोई स्वतंत्र राय नहीं है और चिकित्सा विशेषज्ञों की राय के अभाव में, याचिकाकर्ता पर अभियोजन नहीं चलाया जा सकता। यह तर्क दिया गया है कि कलेक्टर के निर्देशन में गठित समिति की रिपोर्ट याचिकाकर्ता के विरुद्ध दांडिक चिकित्सकीय

उपेक्षा का मामला दर्ज करने का आधार नहीं बन सकती, क्योंकि उस समिति के दो चिकित्सकों ने स्पष्ट रूप से कहा था कि यह दांडिक चिकित्सा उपेक्षा का मामला नहीं है, और इसलिए, याचिकाकर्ता के विरुद्ध अपराध दर्ज करने, और अभियोग-पत्रप्रस्तुत करने का कोई औचित्य नहीं है। यह तर्क दिया गया है कि संबंधित विषय के चिकित्सा विशेषज्ञों की निर्णायक रिपोर्ट के अभाव में न्यायालय इसका संज्ञान नहीं ले सकता था।

(22) कलेक्टर द्वारा गठित जांच समिति की रिपोर्ट (अनुलग्नक पी-3) के अवलोकन से पता चलता है कि उक्त समिति ने दर्ज किया कि सोनू बंसल के उपचार के मामले में याचिकाकर्ता द्वारा घोर उपेक्षा बरती गई, मृत्यु की जानकारी होने के बाद भी इसे छिपा दिया गया और गर्भवती महिला या उसके रिश्तेदारों को उपेक्षा को छिपाने के उद्देश्य से सूचित नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप अन्य भ्रूण की भी मृत्यु हो गई, और इसलिए यह दांडिक चिकित्सा उपेक्षा का मामला है। यह देखा गया है कि याचिकाकर्ता ने भारतीय चिकित्सा परिषद के विभिन्न प्रावधानों का उल्लंघन किया। डॉ. पी. के. श्रीवास्तव, सिविल सर्जन, अंबिकापुर के साथ-साथ डॉ. सुषमा सिन्हा, स्त्री रोग विशेषज्ञ भी उक्त समिति के सदस्य थे। हालाँकि, डॉ. श्रीवास्तव ने उक्त रिपोर्ट पर हस्ताक्षर नहीं किए, लेकिन अपनी राय दर्ज की कि यह गलत निर्णय या कम आकने का मामला था और उनकी रिपोर्ट अलग से संलग्न है। अपनी अलग रिपोर्ट (अनुलग्नक पी-4) में, यह राय दी गई थी कि यह उपेक्षा, घोर उतावलापन या असावधानीपूर्ण कृत्य का मामला नहीं था और याचिकाकर्ता के विरुद्ध दांडिक मामला दर्ज करने का कोई आधार नहीं है। जहाँ तक दूसरी चिकित्सक डॉ. सुषमा सिन्हा का प्रश्न है, उन्होंने रिपोर्ट पर हस्ताक्षर करते समय उस पर कुछ नहीं लिखा था, लेकिन याचिकाकर्ता एक अलग, बिना तिथि वाली राय पर भरोसा करना चाहता है जिसमें यह राय दी गई है कि यह केवल गलत निदान का मामला है, दांडिक उपेक्षा का नहीं। याचिका में यह नहीं बताया गया है कि इसे कलेक्टर के पास कब भेजा गया था।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(23) दं.प्र. सं. की धारा 161 के तहत दर्ज चिकित्सक सिस्टर बियाट्रेस के कथन से पता चलता है कि वह मिशन चिकित्सालय में चिकित्सक के रूप में कार्य कर रही थीं, जहां गर्भवती महिला को उपचार के लिए

लाया गया था। बच्चे और उसकी मां की चिकित्सा परीक्षण वाले उनके विस्तृत कथन में कहा गया है कि गर्भवती महिला श्रीमती सोनू बंसल के गर्भ में भ्रूण की मृत्यु याचिकाकर्ता डॉ. परिधा की ओर से चिकित्सकीय उपेक्षा के कारण हुई। दं.प्र. सं. की धारा 161 के तहत दर्ज डॉ. आनंद जोशी के कथन में यह दर्ज किया गया है कि याचिकाकर्ता की ओर से चिकित्सकीय उपेक्षा के कारण मृत्यु हुई। जांच समिति की दिनांक 26-12-2006 की रिपोर्ट से भी पता चला है कि यह राय बन गई है कि याचिकाकर्ता की ओर से घोर उपेक्षा के कारण न केवल पहले भ्रूण बल्कि दूसरे भ्रूण की भी मृत्यु हो गई। यद्यपि याचिकाकर्ता का तर्क यह है कि उक्त चिकित्सक श्रीमती सुषमा सिन्हा ने कलेक्टर को लिखा था कि याचिकाकर्ता ने कोई उपेक्षा नहीं की है, फिर भी न तो याचिका में यह कहा गया है और न ही चिकित्सक श्रीमती सुषमा सिन्हा के कथित पत्र (अनुलग्नक पी-5) से यह स्पष्ट है कि यह कलेक्टर को कब भेजा गया था। यह बताना सुसंगत है कि उक्त चिकित्सक श्रीमती सुषमा सिन्हा ने रिपोर्ट की विषयवस्तु पर कोई आपत्ति किए बिना दिनांक 26-12-2006 को रिपोर्ट पर हस्ताक्षर किए थे। उन्होंने डॉ. पी. के. श्रीवास्तव की तरह अलग से कोई राय नहीं लिखी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(24) डॉ. आनंद जोशी, चिकित्सक सिस्टर बिट्रेस के कथन और दिनांक 26-12-2006 की जांच रिपोर्ट से, जिस पर डॉ. श्रीमती सुषमा सिन्हा हस्ताक्षरकर्ता हैं, यह पता चला है कि अभिलेख पर चिकित्सा राय उपलब्ध है जिसमें याचिकाकर्ता की ओर से उच्च डिग्री की उपेक्षा का आरोप अधिरोपित किया गया है जिससे गर्भवती महिला श्रीमती सोनू बंसल के गर्भ में शिशुओं की मृत्यु हो गई। इस न्यायालय की राय में, उपरोक्त साक्ष्य के प्रकाश में, यह नहीं कहा जा सकता है कि विवेचना अधिकारी ने जैकब मैथ्यू (पुर्वोक्त) के मामले के निर्णय के कंडिका 53 में निहित सर्वोच्च न्यायालय के दिशानिर्देशों का उल्लंघन किया। विवेचना अधिकारी अपराध दर्ज करने के लिए आगे बढ़े और एक जांच रिपोर्ट के समर्थन में मामले की जांच की, जिस पर डॉ. श्रीमती सुषमा सिन्हा, स्त्री रोग विशेषज्ञ हस्ताक्षरकर्ता थीं। डॉ. आनंद जोशी और चिकित्सक सिस्टर बिट्रेस के कथन भी लिए गए इस प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों का पर्याप्त रूप से पालन किया गया है। यह परीक्षण का विषय होगा कि अभियोजन पक्ष जाँच रिपोर्ट

और डॉ. आनंद जोशी एवं चिकित्सक सिस्टर बिट्रेस के कथनों में बताये गये उपेक्षा के मामले को साबित कर पाता है या नहीं।

(25) याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का अगला तर्क कि यदि अभियोजन पक्ष का मामला उसके वास्तविक अर्थ पर स्वीकार भी कर लिया जाता है, तो भी विचारण के लिए कोई मामला नहीं बनता है और याचिकाकर्ता पर विचारण चलाना विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है, इस पर विचार करने की आवश्यकता है। सबसे पहले, दिनांक 26-12-2006 की एक विस्तृत जांच रिपोर्ट उपलब्ध है जो दो चिकित्सकों सहित चार व्यक्तियों की एक समिति द्वारा की गई जांच का परिणाम है। यह सत्य है कि डॉ. श्रीवास्तव ने अपनी अलग राय लिखी है, डॉ. श्रीमती सुषमा सिन्हा उपरोक्त जांच रिपोर्ट की हस्ताक्षरकर्ता हैं और रिपोर्ट में उस चिकित्सक द्वारा अलग राय के संबंध में कोई समर्थन नहीं है। अभिलेख पर उपलब्ध प्रथम सूचना रिपोर्ट के अवलोकन से स्पष्ट रूप से घोर उपेक्षा के आरोप हैं। मैंने विवेचना के दौरान पुलिस द्वारा दर्ज केस डायरी के कथनों को देखा है जिसे याचिकाकर्ता ने दस्तावेज को अभिलेख पर लेने के लिए एक आवेदन के साथ सामूहिक रूप से अनुलग्नक पी-15 के रूप में अभिलेख पर रखा है। सुमन बंसल, राकेश बंसल, श्रीमती सीमा बंसल, डॉ. आनंद जोशी और चिकित्सक सिस्टर बियाट्रेस ने विशिष्ट आरोप अधिरोपित किये हैं, जिनके सिद्ध होने पर याचिकाकर्ता को दोषसिद्धि भी हो सकती है। इस स्तर पर, यह न्यायालय आरोपों की सत्यता, शुद्धता और विश्वसनीयता से चिंतित नहीं है। यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य से कि क्या प्रथम सूचना रिपोर्ट, अभियोग-पत्रऔर दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने का मामला बनता है, इस न्यायालय ने उपर्युक्त साक्षियों के कथनों पर विचार किया है। उन कथनों, जाँच रिपोर्ट, प्रथम सूचना रिपोर्ट और केस डायरी के कथनों के अवलोकन से, यह न्यायालय यह मानने में असमर्थ है कि अभियोजन पक्ष के मामले को उसके वास्तविक अर्थ पर लेने पर भी, कोई भी मामला विचारणीय नहीं बनता है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(26) यह ध्यान देने योग्य है कि याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय में उस समय आवेदन किया है जब विवेचना पूरी हो चुकी है, अभियोग-पत्रप्रस्तुत किया जा चुका है और विचारण न्यायालय द्वारा संज्ञान

लिया जा चुका है। **हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य, 1992 अनुपूरक (1) सर्वोच्च न्यायालय प्रकरण 335** के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति के प्रयोग और दं.प्र. सं. की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्ति के मामले में दिशानिर्देश निर्धारित किए और यह अभिनिर्धारित किया गया:-

"102. अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न सुसंगत प्रावधानों की व्याख्या और अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति या संहिता की धारा 482 के तहत अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग से संबंधित निर्णयों की श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में, जिन्हें हमने ऊपर उद्धृत और पुन: प्रस्तुत किया है, हम उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित श्रेणियों के मामले देते हैं जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है, हालांकि किसी भी सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और पर्याप्त रूप से प्रणालीकृत और अनम्य दिशानिर्देश या कठोर सूत्र निर्धारित करना संभव नहीं हो सकता है और असंख्य प्रकार के मामलों की एक विस्तृत सूची देना संभव नहीं है जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(1) जहाँ प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके वास्तविक अर्थ पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनाते हैं या अभियुक्त के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनाते हैं।

(2) जहाँ प्रथम सूचना रिपोर्ट और प्रथम सूचना रिपोर्ट के साथ दी गई अन्य सामग्री, यदि कोई हो, में अधिरोपित आरोप किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं, तो संहिता की धारा 155(2) की सीमा में दंडाधिकारी के आदेश के अलावा, संहिता की धारा 156(1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा विवेचना को उचित ठहराया जा सकता है।

(3) जहाँ प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए निर्विवाद आरोप और उनके समर्थन में एकत्र किए गए साक्ष्य किसी अपराध के किए जाने का खुलासा नहीं करते हैं और अभियुक्त के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनाते हैं।

(4) जहाँ प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप संज्ञेय अपराध नहीं हैं, बल्कि केवल असंज्ञेय अपराध हैं, वहाँ संहिता की धारा 155(2) के अंतर्गत दंडाधिकारी के आदेश के बिना पुलिस अधिकारी द्वारा विवेचना की अनुमति नहीं है।

(5) जहाँ प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं कि उनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(6) जहाँ संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके अंतर्गत दांडिक कार्यवाही शुरू की जाती है) के किसी भी प्रावधान में कार्यवाही शुरू करने और उसे जारी रखने पर स्पष्ट विधिक रोक लगाई गई है और/या जहाँ संहिता या संबंधित अधिनियम में पीड़ित पक्ष के शिकायत का प्रभावी निवारण करने वाला कोई विशिष्ट प्रावधान है।

(7) जहां दांडिक कार्यवाही स्पष्ट रूप से असद्भावपूर्ण आशय से की जाती है और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण तरीके से अभियुक्त पर बदला लेने के गुप्त उद्देश्य से और निजी एवं व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे परेशान करने के उद्देश्य से शुरू की जाती है।"

(27) **एम.एम.टी.सी. लिमिटेड बनाम मेडिकल केमिकल्स एंड फार्मा (प्रा.) लिमिटेड, 2002 (1) एससीसी 234** के मामले में, यह अभिनिर्धारित किया गया:-

"13. विद्वान न्यायाधीश ने इसके बाद तथ्यों पर विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि चेक प्रतिभूति के रूप में जारी किए गए थे, न कि जारी किए जाने की तिथि पर विद्यमान किसी ऋण या देयता के लिए। ऐसा करते हुए विद्वान न्यायाधीश ने इस

सुस्थापित विधि की अनदेखी की है कि दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने की शक्ति का प्रयोग अत्यंत कठोरता और सावधानी से किया जाना चाहिए। यह स्थापित विधि है कि इस स्तर पर न्यायालय द्वारा शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता, वास्तविकता या अन्यथा के बारे में जाँच शुरू करना उचित नहीं है। अंतर्निहित शक्तियाँ न्यायालय को अपनी इच्छा या सनक के अनुसार कार्य करने का मनमाना अधिकारिता प्रदान नहीं करती हैं। इस स्तर पर न्यायालय गुण-दोष पर विचार नहीं कर सकता था और/या इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता था कि कोई ऋण या देयता विद्यमान नहीं थी।"

(28) **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल** (पुर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को **एम. एन. ओझा बनाम आलोक कुमार श्रीवास्तव, 2009 (9) एससीसी 682**, **के. अशोक बनाम एन. एल. चंद्रशेखर, 2009 (5) एससीसी 199**, **पंकज कुमार बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, 2008 (16) एससीसी 117, फखरुद्दीन अहमद बनाम उत्तरांचल राज्य, 2008 (17) एससीसी 157 और यू.पी. प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड बनाम डॉ. भूपेंद्र कुमार मोदी, 2009 (2) एससीसी 147 के मामलों में दोहराया गया है।** उपरोक्त निर्णयों में प्रतिपादित सिद्धांतों को प्रथम सूचना रिपोर्ट और आरोपपत्र सहित अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर लागू करते हुए, यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें निहित आरोपों को यदि वास्तविक अर्थ पर स्वीकार भी कर लिया जाए और पूरी तरह से सही मान लिया जाए, तो भी अपराध का खुलासा नहीं होता।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(29) अंतिम विश्लेषण में, मुझे याचिका में कोई सार नहीं दिखता; इसलिए इसे खारिज किया जाना चाहिए और तदनुसार खारिज किया जाता है। अगर याचिकाकर्ता चाहे तो वह दिनांक 24-09-2008 के आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण का रास्ता अपना सकता है। अंत में, यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि आरोपों और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के संबंध में इस न्यायालय द्वारा जो भी टिप्पणियाँ की गई हैं, वे केवल इस बात की जाँच के उद्देश्य से हैं कि क्या इस स्तर पर प्रथम सूचना रिपोर्ट, आरोपपत्र और संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को अभिखण्डित करने का मामला भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत याचिका पर विचार

करते समय न्यायिक पुनर्विलोकन के अनुमेय के अंतर्गत आता है। विद्वान विचारण न्यायालय आरोप विरचित करते समय या अपने अंतिम निष्कर्ष पर कि दोषसिद्धि का मामला बनता है या नहीं, इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों से प्रभावित नहीं होगा। वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जा रहा है।

सही/-

मनींद्र मोहन श्रीवास्तव

न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

Translated by ---- Vijay Kumar Sahu, Advocate